विशद

श्री महावीर समवशरण विधान

माण्डला

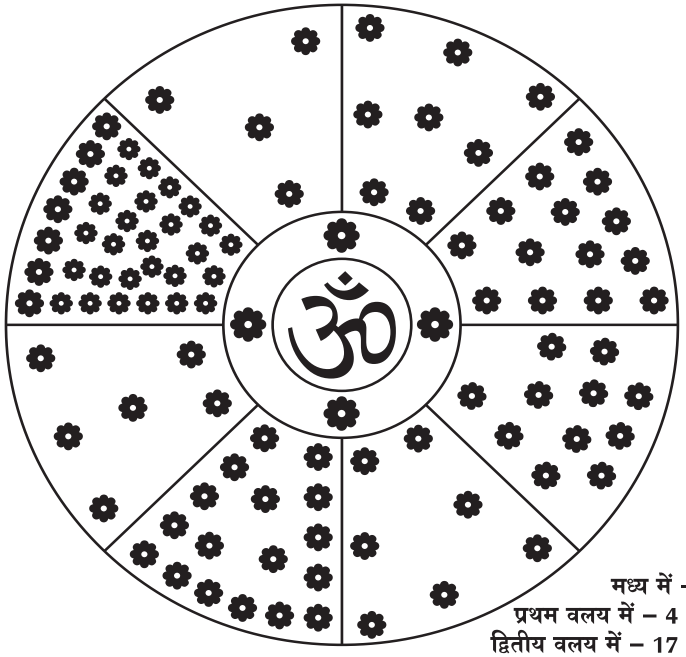

मध्य में – ॐ
प्रथम वलय में – 4 अर्घ्य
द्वितीय वलय में – 17 अर्घ्य
तृतीय वलय में – 6 अर्घ्य
चतुर्थ वलय में – 34 अर्घ्य
पंचम वलय में – 4 अर्घ्य
षष्टम वलय में – 8 अर्घ्य
सप्तम वलय में – 18 अर्घ्य
अष्टम वलय में – 11 अर्घ्य
नवम वलय में – 7 अर्घ्य
कुल 88 अर्घ्य

रचयिता :
प. पू. साहित्य रत्नाकर आचार्य श्री 108 विशदसागर जी महाराज

कृति : **विशद श्री महावीर समवशरण विधान**

कृतिकार : प. पू. साहित्य रत्नाकर, क्षमामूर्ति
आचार्य श्री 108 विशदसागरजी महाराज

संस्करण : प्रथम-2015 ' प्रतियाँ : 1000

संकलन : मुनि श्री 108 विशालसागरजी महाराज

सहयोगी : क्षुल्लक श्री 105 विसोमसागरजी महाराज
क्षु. श्री भक्तिभारती माताजी, क्षु. श्री वात्सल्यभारती माताजी

संपादन : ब्र. ज्योति दीदी ब्र. आस्था दीदी, ब्र. सपना दीदी
ब्र. आरती दीदी

प्राप्ति स्थल : 1. जैन सरोवर समिति, निर्मलकुमार गोधा,
2142, निर्मल निकुंज, रेडियो मार्केट
मनिहारों का रास्ता, जयपुर
ोन : 0141-2319907 (घर) मो. : 9414812008

2. श्री राजेशकुमार जैन ठेकेदार
ए-107, बुध विहार, अलवर, मो. : 9414016566

3. विशद साहित्य केन्द्र
श्री दिगम्बर जैन मंदिर कुआँ वाला जैनपुरी
रेवाड़ी (हरियाणा), 9812502062, 09416888879

4. विशद साहित्य केन्द्र, हरीश जैन
जय अरिहन्त ट्रेडर्स, 6561 नेहरू गली
नियर लाल बत्ती चौक, गांधी नगर, दिल्ली
मो. 09818115971, 09136248971

मूल्य : 25/- रु. मात्र

अर्थ सौजन्य :
श्री सूरजभान ओम प्रकाश जैन
लकड़ी पत्थर वाले काठमण्डी वाले
रोहतक (हरियाणा) 9729771557

eqnzd%ikjlizdk'ku] fnYyh Qksu ua-%09811374961] 09818394651
E-mail : pkjainparas@gmail.com, parasparkashan@yahoo.com

समवशरण का वर्णन

समवशरण की महिमा का वर्णन न तो वाणी से कहा जा सकता है और न कलम से ही लिखा जा सकता है। तीन लोक में दिव्य विभूति कोई और नहीं है, समवशरण ही है।

समवशरण के चारों तरफ चारों दिशाओं में बीस-बीस हजार सीढ़ियां होती है। जिनकी ऊँचाई एक हाथ की होती है। चार कोट और पांच वेदियाँ होती हैं। इन कोट और वेदियों के बीच में आठ भूमियाँ होतीं है। बीच में तीन-तीन पीठ शोभायमान होते हैं। उसमें चार-चार सुन्दर गलियां होती हैं। एक-एक गली का प्रमाण दो-दो कोस होते हैं। 8 भूमियों को ये 4 को 5 वेदियां विभाग करते हैं।

आठों भूमियों के मूल में वज्रमयी कपाटों वाले तोरण द्वारा होते हैं। समवशरण में वेदियों की ऊंचाई जिनेन्द्र भगवान के शरीर से चउगुनी होती है।

सबसे बाहिर के भाग में धूलि साल कोट होता है, इन कोट के चार द्वारा चारों दिशा में विजय, वैजयन्त, जयन्त, अपराजित नाम के होते हैं। प्रत्येक द्वार के पास में गोपुर में, क्षारी, कलश, दर्पण, चामर, ध्वजा, पंखा, छत्र और सुप्रतिष्ठ (ठोना) ये अष्ट मंगल द्रव्य होते है। चारों दरवाजों के बीच दो-दो कोस प्रमाण चार गलियां होती हैं। अन्दर की ओर जाते-जाते इन गलियों का प्रमाण छोटा होता जाता है।

काल, महाकाल, पाण्डु, माणवक, शंख, पदम्, नैसर्प, पिंगल और नाना रत्न ये नव निधियां प्रत्येक की संख्या 108 होती है। अनेक धूप घट होते है। पुतलिया नृत्य करती होती है। सब गोपुर द्वार रत्नमयी सुन्दर तारणी वाले होते हैं। द्वारों के बीच में दोनों पार्श्व भागों में रत्न निर्मित नाट्य शालायें होती है। जिनमें देवांगनायें नृत्य करती रहती हैं। तथा द्वारों पर उत्तम दण्ड रत्न को लिये ज्योतिष देव रक्षक बने खड़े रहते हैं। द्वार के बाहर रत्नों की सीढ़ियों बनी हुई होती हैं।

धूलिसाल कोट के भीतर चैत्य भूमि में अनेक बड़े-बड़े पांच-पांच विशाल महल वाले जिन भवन अर्थात जिन मन्दिर होते हैं। सुन्दर-सुन्दर

वन, बड़े-बड़े कोट के साथ वापी, कूप आदि से पृथ्विया शोभायमान होती है।

प्रथम पृथ्वी में दो-दो नाट्यशालायें बत्तीस-बत्तीस रंग भूमियों सहित होती हैं। जहाँ देवियां नृत्य करती हैं।

द्वारों के बीच में सुन्दर पीठ होते हैं। इन पीठों के ऊपर ऊँचे महान मान स्तम्भ होते हैं। ये मान स्तम्भ तीर्थंकरों की शरीर की ऊँचाई से बारह गुने ऊँचे होते हैं। मानस्तम्भ के दर्शनों को करने मात्र से मिथ्यादृष्टियों का मान भंग हो जाता है।

तीन कोटों के बाहर चारों दिशाओं में चार-चार वापिकाएँ होती हैं। जो कि वीथियों आश्रित एवं निर्मल जल से भरी होती हैं, जहाँ देव क्रीड़ा करते हैं।

प्रत्येक वापी के आश्रित दो-दो कुण्ड होते हैं, जहाँ देव और मनुष्य अपने अपने पांव धोते हैं। यहां उत्तम-उत्तम रत्नमयी ध्वजा, तोरण, घण्टों से युक्त सुन्दर वेदियाँ बनी रहती हैं।

समवशरण में आठ पृथ्वियां निम्न होती हैं।

पहली चैत्य पृथ्वी–जिसमें सुन्दर-सुन्दर चैत्यालय बने होते हैं।

दूसरी खातिका पृथ्वी–जिसमें जल से भरी खाईयां होती हैं।

तीसरी पुष्पवाटिका पृथ्वी–जिसमें रत्नों की बेलों पर अनेक प्रकार के फूल सुशोभित होते हैं।

चौथी उपवन पृथ्वी–जिसमें वन और उपवन शोभायान होते हैं।

पांचवी ध्वजा भूमि–जिसमें दस प्रकार की रत्नमयी ध्वजाएँ फहराती हैं।

छठीं कल्प भूमि–जिसमें दस प्रकार के कल्पवृक्ष मन को हरण करने वाले होते हैं।

सातवीं मन्दिर भूमि–जिसमें अनेक प्रकार के भवन और स्तूप बने होते हैं।

आठवीं मण्डप भूमि–जिसमें सौलह दीवालों के बीच बारह कोठे बने होते हैं।

उनमें बारह गोल सभाएं चारों तरफ होती हैं जिनमें बारह प्रकार के जीव बैठते हैं। जो दिव्य ध्वनी श्रवण करते हैं।

बारह सभाओं में पहली सभा में गणधर और मुनी, दूसरी में कल्पवासी देवियां, तीसरी सभा में आर्यिकाएं और श्राविकाएं, चौथी में ज्योतिष देवियां, पांचवीं में व्यन्तर देव, छटी में भवनवासी देवों की देवियां, सातवीं में भवनवासी देव, आठवीं में व्यन्तर देव की देवियां, नवे में ज्योतिष देव, दशवें में कल्पवासी देव, ग्यारहवीं में चक्रवर्ती राजा और मनुष्य तथा अन्तिम बारहवीं सभा में (कौठे में) तिर्यंच बैठते हैं।

इन बारह सभाओं के बीच गंध कूटी होती है। गन्ध कुटी के चारों तरफ सौलह दरवाजे और बत्तीस सीढ़ियाँ होती हैं। बीच में रत्न जड़ित सिंहासन शोभायमान होता है। सिहांसन स्फटिक मणी का तीर्थंकर के शरीर के बराबर ऊंचा होता है। जिस पर एक हजार पंखुड़ीवाला स्वर्णमयी कमल होता है। इस कमल से चार अंगुल ऊँचे जिनेन्द्र भगवान विराजमान होते हैं। जिनेन्द्र भगवान का पादमूल वहां विद्यमान के कारण समवशरण में क्षायिक सम्यक्त्व भी हो जाता है।

समवशरण की रचना भगवान से ज्ञान प्राप्त होने के लिए होती है। इसकी रचना भगवान को केवल ज्ञान होने के बाद होती है। भगवान जब ज्ञान देते हैं वह मुख से बोलते नहीं बल्कि ध्वनी स्वरूप निकलती है। भगवान के मुख से जब दिव्य ध्वनी खिरती है तब मेघ की गर्जना के समान आवाज ध्वनी होती है। चन्द्रमा से अमृत झरने के समान दिव्य ध्वनी खिरती है।

दिव्य ध्वनि दिन-रात के तीन संध्याओं में नव मूहूर्त अर्थात अठारह घड़ी तक खिरती है। एक बार में 6 घड़ी तक खिरती है। श्रोताओं के कानों में दिव्य ध्वनि एक योजन तक सुनी जा सकती है, तथा श्रोताओं तक जाकर ध्वनि 18 बड़ी भाषाओं और सात सौ लघु भाषाओं में परिणत हो जाती है। द्वादशांग का उसमें वर्णन होता है। निरक्षरी होती है। देव-मनुष्य और पशु सब अपनी अपनी भाषा में समझ जाते हैं। श्रोताओं के प्रश्नों का उत्तर गणधर देव समझाते हैं। कहीं पर चार संध्या (सन्धि) कालों में 6-6 घड़ी खिरती है का वर्णन भी मिलता है।

इस समय भगवान की अरहन्त अवस्था होती है। उनके तेरहवां

गुण स्थान होता है। छियालिस मूल गुण होते हैं। तीर्थंकरों का परमौदारिक शरीर पृथ्वी से पांच हजार धनुष प्रमाण ऊपर चला जाता है।

जब भगवान को केवल ज्ञान होता है तब इन्द्र का आसन कम्पायमान होता है। कल्पवासी देवों के घर घण्टे बजते हैं, भवनवासी देवों के यहां शंख बजते हैं, ज्योतिषी देवों के यहां सिंह नाद होता है, व्यन्तर वासी देवों के यहां पटु पटह शब्द होते हैं। तब सौधर्मेन्द्र कुबेर को बुलाकर समवशरण रचने की आज्ञा देता है। जिनेन्द्र भगवान समवशरण में एक मुंह एक दिशा में विराजमान होते हुए भी भगवान के चारों दिशाओं में मुख रूप में दर्शन होते हैं। अर्थात भगवान का मुंह चारों दिशाओं में प्रतीत (दर्शन) होते हैं।

समवशरण में किसी प्रकार का रोग-शोक-मरण-जन्म-भय-वैर-भाव-भूख-प्यास आदि नहीं होते-समवशरण में 7 बातें नहीं होती-1. भूख, 2. प्यास, 3. रोग, 4. शोक, 5. शत्रुभय, 6. चिंता, 7. द्रव्य मिथ्यात्व। सभी जीव जन्म जात बैर छोड़कर मैत्री भावपूर्वक आपस में बैठते हैं।

भगवान ने अपनी दिव्य ध्वनी द्वारा संसार का वह ज्ञान दिया है जितना संसार में हो सकता है। एक-एक जीव का, एक-एक स्थानों का वर्णन भगवान ने दिव्य ध्वनी द्वारा बताया है। जिसको गणधरों ने ग्रहण किया। गणधरों ने आचार्यों को बताया। आचार्यों ने इसे लिपिबद्ध किया, जिसको जैन शास्त्र कहते हैं-जिन वाणी रूप हम पूजते हैं।

वर्तमान के सर्वाधिक विधान रचयिता **आचार्य श्री 108 विशद सागर जी महाराज** की मधुर लेखनी से रचित यह महावीर समवशरण विधान वर्तमान की एक अनमोल कृति है। यह समवशरण विधान आपको भी समवशरण की प्राप्ति कराने में हेतु बने इसी भावना के साथ गुरुवर के श्री चरणों में त्रिभक्ति पूर्वक नमोस्तु!

-मुनि विशाल सागर (संघस्थ)

प्रासुक अष्ट द्रव्य हे गुरुवर! थाल सजाकर लाये हैं।
महाव्रतों को धारण कर लें, मन भाव बनाये है॥
विशद सिंधु के श्री चरणों में, अर्घ्य समर्पित करते हैं।
पद अनर्घ हो प्राप्त हमें गुरु, चरणों में सिर धरते हैं॥

ॐ हूँ 108 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय अनर्घ पद प्राप्ताय अर्घ्यं निर्व. स्वा.।

मूलनायक सहित समुच्चय पूजन

(स्थापना)

तीर्थंकर कल्याणक धारी, तथा देव नव कहे महान्।
देव-शास्त्र--गुरु हैं उपकारी, करने वाले जग कल्याण॥
मुक्ती पाए जहाँ जिनेश्वर, पावन तीर्थ क्षेत्र निर्वाण।
विद्यमान तीर्थंकर आदि, पूज्य हुए जो जगत प्रधान॥
मोक्ष मार्ग दिखलाने वाला, पावन वीतराग विज्ञान।
विशद हृदय के सिंहासन पर, करते भाव सहित आह्वान॥

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक .... सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव-शास्त्र-गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञान! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितौ भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(शम्भू छन्द)

जल पिया अनादी से हमने, पर प्यास बुझा न पाए हैं।
हे नाथ! आपके चरण शरण, अब नीर चढ़ाने लाए हैं॥
जिन तीर्थंकर नवदेव तथा, जिन देव शास्त्र गुरु उपकारी।
शिव सौख्य प्रदायक हैं जग में, हम पूज रहे मंगलकारी॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक......सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव-शास्त्र-गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल रही कषायों की अग्नि, हम उससे सतत सताए हैं।
अब नील गिरि का चंदन ले, संताप नशाने आए हैं॥
जिन तीर्थंकर नवदेव तथा, जिन देव शास्त्र गुरु उपकारी।

शिव सौख्य प्रदायक हैं जग में, हम पूज रहे मंगलकारी॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक......सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव-शास्त्र-गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

गुण शाश्वत मम अक्षय अखण्ड, वह गुण प्रगटाने आए हैं।
निज शक्ति प्रकट करने अक्षत, यह आज चढ़ाने लाए हैं॥
जिन तीर्थंकर नवदेव तथा, जिन देव शास्त्र गुरु उपकारी।
शिव सौख्य प्रदायक हैं जग में, हम पूज रहे मंगलकारी॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक......सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव-शास्त्र-गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्पों से सुरभी पाने का, असफल प्रयास करते आए।
अब निज अनुभूति हेतु प्रभु, यह सुरभित पुष्प यहाँ लाए॥
जिन तीर्थंकर नवदेव तथा, जिन देव शास्त्र गुरु उपकारी।
शिव सौख्य प्रदायक हैं जग में, हम पूज रहे मंगलकारी॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक......सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव-शास्त्र-गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

निज गुण हैं व्यंजन सरस श्रेष्ठ, उनकी हम सुधि बिसराए हैं।
अब क्षुधा रोग हो शांत विशद, नैवेद्य चढ़ाने लाए हैं॥
जिन तीर्थंकर नवदेव तथा, जिन देव शास्त्र गुरु उपकारी।
शिव सौख्य प्रदायक हैं जग में, हम पूज रहे मंगलकारी॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक......सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव-शास्त्र-गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञाता दृष्टा स्वभाव मेरा, हम भूल उसे पछताए हैं।
पर्याय दृष्टि में अटक रहे, न निज स्वरूप प्रगटाए हैं॥
जिन तीर्थंकर नवदेव तथा, जिन देव शास्त्र गुरु उपकारी।
शिव सौख्य प्रदायक हैं जग में, हम पूज रहे मंगलकारी॥6॥

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक......सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव-शास्त्र-गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

जो गुण सिद्धों ने पाए हैं, उनकी शक्ती हम पाए हैं।
अभिव्यक्ति नहीं कर पाए अतः, भवसागर में भटकाए हैं॥
जिन तीर्थंकर नवदेव तथा, जिन देव शास्त्र गुरु उपकारी।
शिव सौख्य प्रदायक हैं जग में, हम पूज रहे मंगलकारी॥7॥

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक......सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव-शास्त्र-गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्यो अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल उत्तम से भी उत्तम शुभ, शिवफल हे नाथ ना पाए हैं।
कर्मोंकृत फल शुभ अशुभ मिला, भव सिन्धु में गोते खाए हैं॥
जिन तीर्थंकर नवदेव तथा, जिन देव शास्त्र गुरु उपकारी।
शिव सौख्य प्रदायक हैं जग में, हम पूज रहे मंगलकारी॥8॥

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक......सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव-शास्त्र-गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

पद है अनर्घ मेरा अनुपम, अब तक यह जान न पाए हैं।
भटकाते भाव विभाव जहाँ, वह भाव बनाते आए हैं॥
जिन तीर्थंकर नवदेव तथा, जिन देव शास्त्र गुरु उपकारी।
शिव सौख्य प्रदायक हैं जग में, हम पूज रहे मंगलकारी॥9॥

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक......सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव-शास्त्र-गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– प्रासुक करके नीर यह, देने जल की धार।
लाए हैं हम भाव से, मिटे भ्रमण संसार॥

शान्तये शांतिधारा...

दोहा– पुष्पों से पुष्पाञ्जली, करते हैं हम आज।
सुख-शांती सौभाग्यमय, होवे सकल समाज॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्...

पंच कल्याणक के अर्घ्य

तीर्थंकर पद के धनी, पाएँ गर्भ कल्याण।

अर्चा करें जो भाव से पावें निज स्थान॥1॥

ॐ ह्रीं गर्भकल्याणकप्राप्त मूलनायक....सहित सर्व जिनेश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महिमा जन्म कल्याण की, होती अपरम्पार।
पूजा कर सुर नर मुनी, करें आत्म उद्धार॥2॥

ॐ ह्रीं जन्मकल्याणकप्राप्त मूलनायक....सहित सर्व जिनेश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तप कल्याणक प्राप्त कर, करें साधना घोर।
कर्म काठ को नाशकर, बढ़ें मुक्ति की ओर॥3॥

ॐ ह्रीं तपकल्याणकप्राप्त मूलनायक....सहित सर्व जिनेश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रगटाते निज ध्यान कर, जिनवर केवलज्ञान।
स्व-पर उपकारी बनें, तीर्थंकर भगवान॥4॥

ॐ ह्रीं ज्ञानकल्याणकप्राप्त मूलनायक....सहित सर्व जिनेश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आठों कर्म विनाश कर, पाते पद निर्वाण।
भव्य जीव इस लोक में, करें विशद गुणगान॥5॥

ॐ ह्रीं मोक्षकल्याणकप्राप्त मूलनायक....सहित सर्व जिनेश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा– तीर्थंकर नव देवता, तीर्थ क्षेत्र निर्वाण।
देव शास्त्र गुरुदेव का, करते हम गुणगान॥

(शम्भू छन्द)

गुण अनन्त हैं तीर्थंकर के, महिमा का कोई पार नहीं।
तीन लोकवर्ती जीवों में, और ना मिलते अन्य कहीं॥
विंशति कोड़ा-कोड़ी सागर, कल्प काल का समय कहा।
उत्सर्पण अरु अवसर्पिण यह, कल्पकाल दो रूप रहा॥1॥
रहे विभाजित छह भेदों में, यहाँ कहे जो दोनों काल।
भरतैरावत द्वय क्षेत्रों में, कालचक्र यह चले त्रिकाल॥

चौथे काल में तीर्थंकर जिन, पाते हैं पाँचों कल्याण।
चौबिस तीर्थंकर होते हैं, जो पाते हैं पद निर्वाण॥2॥
वृषभनाथ से महावीर तक, वर्तमान के जिन चौबीस।
जिनकी गुण महिमा जग गाए, हम भी चरण झुकाते शीश॥
अन्य क्षेत्र सब रहे अवस्थित, हों विदेह में बीस जिनेश।
एक सौ साठ भी हो सकते हैं, चतुर्थकाल यहाँ होय विशेष॥3॥
अर्हन्तों के यश का गौरव, सारा जग यह गाता है।
सिद्ध शिला पर सिद्ध प्रभु को, अपने उर से ध्याता है॥
आचार्योपाध्याय सर्व साधु हैं, शुभ रत्नत्रय के धारी।
जैनधर्म जिन चैत्य जिनालय, जिन आगम जग उपकारी॥4॥
प्रभु जहाँ कल्याणक पाते, वह भूमि होती पावन।
वस्तु स्वभाव धर्म रत्नत्रय, कहा लोक में मनभावन॥
गुणवानों के गुण चिंतन से, गुण का होता शीघ्र विकाश।
तीन लोक में पुण्य पताका, यश का होता शीघ्र प्रकाश॥5॥
वस्तु तत्त्व जानने वाला, भेद ज्ञान प्रगटाता है।
द्वादश अनुप्रेक्षा का चिन्तन, शुभ वैरागय जगाता है॥
यह संसार असार बताया, इसमें कुछ भी नित्य नहीं।
शाश्वत सुख को जग में खोजा, किन्तु पाया नहीं कहीं॥6॥
पुण्य पाप का खेल निराला, जो सुख-दुःख का दाता है।
और किसी की बात कहें क्या, तन न साथ निभाता है॥
गुप्ति समिति धर्मादि का, पाना अतिशय कठिन रहा।
संवर और निर्जरा करना, जग में दुर्लभ काम कहा॥7॥
सम्यक् श्रद्धा पाना दुर्लभ, दुर्लभ होता सम्यक् ज्ञान।
संयम धारण करना दुर्लभ, दुर्लभ होता करना ध्यान॥
तीर्थंकर पद पाना दुर्लभ, तीन लोक में रहा महान्।
विशद भाव से नाम आपका, करते हैं हम नित गुणगान॥8॥
शरणागत के सखा आप हो, हरने वाले उनके पाप।
जो भी ध्याय भक्ति भाव से, मिट जाए भव का संताप॥
इस जग के दुःख हरने वाले, भक्तों के तुम हो भगवान।
जब तक जीवन रहे हमारा, करते रहें आपका ध्यान॥9॥

दोहा– नेता मुक्ती मार्ग के, तीन लोक के नाथ।
शिवपद पाने नाथ हम, चरण झुकाते माथ॥

~~ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक......सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव-शास्त्र-गुरु,~~ सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्यो अनर्घपदप्राप्त्ये

महावीर समवशरण पूजा

स्थापना

समवशरण श्री महावीर का, धनपति द्वारा रचा गया।
विपुलाचल पर्वत के ऊपर, बना एक इतिहास नया॥
अन्तर बाह्य लक्ष्मी पाए, अनन्त चतुष्टय धर भगवान।
ऐसे श्री महावीर प्रभू का, भाव सहित करते आह्वान॥
दोहा– गुणानन्त के कोष जिन, महिमा का ना पार।
पद वन्दन करते विशद, नत हो बारम्बार॥

ॐ ह्रीं अन्तरंगबहिरंगलक्ष्मीसमन्वितश्रीमहावीरस्वामिन्! अत्र अवतर अवतर संवौषट इति आह्वानं। ॐ ह्रीं अन्तरंगबहिरंगलक्ष्मीसमन्वितश्रीमहावीरस्वामिन्! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। ॐ ह्रीं अन्तरंगबहिरंगलक्ष्मीसमन्वित श्रीमहावीरस्वामिन्! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(तर्ज : चौबोला छन्द)

सागर के जल से धोकर भी, मन निर्मल ना होएगा।
भक्ति अर्चना का जल सिंचन, बीज सुखों का बोएगा॥
समवशरण में महावीर जी, अतिशय शोभा पाते हैं।
जिनकी अर्चा करने पद में, सादर शीश झुकाते हैं॥1॥

ॐ ह्रीं अंतरंग–बहिरंगलक्ष्मी–समन्वित–श्रीमहावीरस्वामिने जलं निर्व. स्वाहा।

जलते हैं क्रोधादिक से हम, गल्ती करते कई प्रकार।
कर्मोदय से बचने हेतू, अर्चा करते मंगलकार॥
समवशरण में महावीर जी, अतिशय शोभा पाते हैं।
जिनकी अर्चा करने पद में, सादर शीश झुकाते हैं॥2॥

ॐ ह्रीं अंतरंग–बहिरंगलक्ष्मी–समन्वित–श्रीमहावीरस्वामिने चन्दनं निर्व. स्वाहा।

स्थिरता भक्ती में आए, चंचलता दुख का कारण है।
अक्षत से अक्षय जिन पूजा, दुःखों का श्रेष्ठ निवारण है॥

समवशरण में महावीर जी, अतिशय शोभा पाते हैं।
जिनकी अर्चा करने पद में, सादर शीश झुकाते हैं॥3॥

ॐ ह्रीं अंतरंग–बहिरंगलक्ष्मी–समन्वित–श्रीमहावीरस्वामिने अक्षयपद प्राप्ताय अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

होके भोगों के दीवाने, चारों गतियों में भ्रमण किया।
ना प्यास आश की शांत हुई, इन्द्रिय विषयों में रमण किया॥
समवशरण में महावीर जी, अतिशय शोभा पाते हैं।
जिनकी अर्चा करने पद में, सादर शीश झुकाते हैं॥4॥

ॐ ह्रीं अंतरंग–बहिरंगलक्ष्मी–समन्वित–श्रीमहावीरस्वामिने पुष्पं निर्व. स्वाहा।

ना उदर कभी भी भरता है, निशदिन भोजन की माँग करे।
जिह्वा व्यंजन में रमती है, संयम जीवन में सौख्य भरे॥
समवशरण में महावीर जी, अतिशय शोभा पाते हैं।
जिनकी अर्चा करने पद में, सादर शीश झुकाते हैं॥5॥

ॐ ह्रीं अंतरंग–बहिरंगलक्ष्मी–समन्वित–श्रीमहावीरस्वामिने नैवेद्यं निर्व. स्वाहा।

निज में अज्ञान अंधेरा है, बाहर के उजाले में भटके।
ना ध्यान किया निज चेतन का, हम मोह कषायों में अटके॥
समवशरण में महावीर जी, अतिशय शोभा पाते हैं।
जिनकी अर्चा करने पद में, सादर शीश झुकाते हैं॥6॥

ॐ ह्रीं अंतरंग–बहिरंगलक्ष्मी–समन्वित–श्रीमहावीरस्वामिने दीपं निर्व. स्वाहा।

जीवन सुधारने का सोचा, पर कर्मों ने भटकाया है।
पुरुषार्थ प्रबल ना हो पाया, भव-भव में धोखा खाया है।
समवशरण में महावीर जी, अतिशय शोभा पाते हैं।
जिनकी अर्चा करने पद में, सादर शीश झुकाते हैं॥7॥

ॐ ह्रीं अंतरंग–बहिरंगलक्ष्मी–समन्वित–श्रीमहावीरस्वामिने धूपं निर्व. स्वाहा।

है नित्य निरंजन अविनाशी, आतम का आदि या अंत नहीं।
पर्याय बदलती है पल-पल, मुक्ती के शिवा कोइ पंथ नहीं॥

समवशरण में महावीर जी, अतिशय शोभा पाते हैं।
जिनकी अर्चा करने पद में, सादर शीश झुकाते हैं।।8।।

ॐ ह्रीं अंतरंग-बहिरंगलक्ष्मी-समन्वित-श्रीमहावीरस्वामिने फलं निर्व. स्वाहा।

मन मोहक ये संसार रहा, हर वस्तू मोहित करती है।
निज आत्म ध्यान की शक्ति जगे, जो कर्म कालिमा हरती है।।
समवशरण में महावीर जी, अतिशय शोभा पाते हैं।
जिनकी अर्चा करने पद में, सादर शीश झुकाते हैं।।9।।

ॐ ह्रीं अंतरंग-बहिरंगलक्ष्मी-समन्वित-श्रीमहावीरस्वामिने अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

दोहा– शांतिधारा के लिए, प्रासुक लाए नीर।
अष्ट कर्म का नाश हो, मिटे विभव की पीर।।

।।शान्तये शांतिधारा।।

दोहा– पूजा करने के लिए, द्रव्य लिया ये शुद्ध।
सम्यकदर्शन ज्ञान हम, पाएँ चरण विशुद्ध।।

।।इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।।

पञ्चकल्याणक के अर्घ्य

(चाल छन्द)

षष्ठी आषाढ़ सुदि पाए, सुर रत्न की झड़ी लगाए।
चहुँ दिश में छाई लाली, मानो आ गई दिवाली।।1।।

ॐ ह्रीं आषाढ़ शुक्ल षष्ठी गर्भकल्याणक प्राप्त श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तेरस सुदि चैत की आई, जन्मोत्सव की घड़ी पाई।
प्राणी जग के हर्षाए, खुश हो जयकार लगाए।।2।।

ॐ ह्रीं चैत्रसुदी तेरस जन्मकल्याणक प्राप्त श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अगहन सित दशमी गाई, प्रभु ने जिन दीक्षा पाई।
मन में वैराग्य जगाया, अन्तर का राग हटाया।।3।।

ॐ ह्रीं मगसिर सुदी दशमी तपकल्याणक प्राप्त श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वैशाख सु दशमी पाए, प्रभु केवल ज्ञान जगाए।
सुर समवशरण बनवाए, जिन दिव्य ध्वनि सुनाएँ।।4।।

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्ला दशमी केवलज्ञान प्राप्त श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों की सांकल तोड़े, मुक्ती से नाता जोड़े।
कार्तिक की अमावस पाए, शिवपुर में धाम बनाए।।5।।

ॐ ह्रीं कार्तिक अमावस्यायां मोक्ष कल्याणक प्राप्त श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समुच्चय जयमाला

दोहा–तीन लोक में श्रेष्ठ है, महावीर सन्देश।
पाने सब व्याकुल रहे, ब्रह्मा विष्णु महेश।।

प्रभु दर्शन से दर्शन मिलता, वाणी से शुभ सन्देश मिले।
चर्या से चारित मिलता है, सम्यक् तप करके हृदय खिले।।
सभी अमंगल हरने वाले, जो वीर प्रभु पहले मंगल।
श्रद्धा भक्ति पूजा करके हो, जाय नाश सारे कल मल।।
सिद्धारथ के नन्दन बनकर, प्रभु कुण्डलपुर में जन्म लिए।
माता त्रिशाला की कुक्षि को, आकर प्रभु जी धन्य किए।।
जब वर्धमान का जन्म हुआ, सारे जग में मंगल छाया।
सुर नर पशु की क्या बात करें, नरकों में सुख का क्षण आया।।
इन्द्रों ने जय-जय कार किए, नर सुर पशु जग के हर्षाए।
सौधर्म इन्द्र ने खुश होकर, कई रत्न कुबेर से वर्षाए।।
बचपन-बचपन में बीत गया, फिर युवा अवस्था को पाया।
करके कई कौतूहल जग में, लोगों के मन को हर्षाया।।
जब योग्य अवस्था भोगों की, तब योग प्रभु ने धार लिया।
नहि ब्याह किया गृह त्याग दिया, संयम से नाता जोड़ लिया।।
प्रभु पंच मुष्ठि केशलुंच कर, वीतराग मुद्रा धारी।
शुभ ध्यान लगाया आतम का, प्रभु हुए स्वयं ही अविकारी।।
तप किए प्रभु द्वादश वर्षों, अरु कर्मों को निर्जीर्ण किए।
फिर शुद्ध चेतना के चिन्तन से, कर्म घातिया क्षीण किए।।

तब केवल ज्ञान प्रकाश हुआ, बन गये प्रभु अन्तर्यामी।
शुभ समवशरण की रचना कर, सुर इन्द्र हुए प्रभु अनुगामी॥
जब प्रभु की वाणी नहीं खिरी, जग के नर नारी अकुलाए।
चौसठ दिन यूँ ही बीत गये, प्रभु की वाणी न सुन पाए॥
सौधर्म इन्द्र चिन्तित होकर, अपने मन में यह सोच रहा।
है समोशरण में कमी कोई, या मेरा है दुर्भाग्य अहा॥
फिर अवधि ज्ञान से जान लिया, गणधर स्वामी न आए हैं।
इसलिए अभी तक जिनवर का, सन्देश नहीं सुन पाए हैं॥
फिर इन्द्र बटुक का भेष धार, गौतम स्वामी के पास गये।
अरु अहं नष्ट करने हेतु, वह प्रश्न किए कुछ नये-नये॥
वह समाधान कर सके नहीं, फिर समवशरण की ओर गये।
गौतम को सबसे पहले ही, शुभ मानस्तंभ के दर्श भये॥
होते ही मान गलित गौतम, प्रभु के चरणों झुक जाते हैं।
तब रत्नत्रय को धार स्वयं, चऊ ज्ञान प्रकट कर पाते हैं॥
विपुलाचल पर्वत के ऊपर, प्रभु की वाणी से बोध मिला।
हर श्रावक का मन प्रमुदित था, हर प्राणी का भी हृदय खिला॥
हे वीर! तुम्हारे शासन में, हम सेवक बनकर आए हैं।
रत्नत्रय की निधियाँ पाने के, हमने शुभ भाव बनाए हैं॥
मन में मेरे कुछ चाह नहीं, वश रत्नत्रय का दान करो।
प्रभु विशद ज्ञान की किरणों से, हमको सद ज्ञान प्रदान करो॥
तुम वीर बली हो महाबली, तुमने सारा जग तारा है।
यह तुमको भक्त पुकार रहा, इसको क्यों नाथ विसारा है॥

(छन्द धत्तानन्द)

जय महावीर सन्मति महान्, जय अतीवीर जय वर्द्धमान।
जय जय जिनेन्द्राय जय वीरनाथ, जय जय जिन चरणों झुका माथ॥

ॐ ह्रीं अंतरंग बहिरंग लक्ष्मी समन्वित श्री महावीर जिनेन्द्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– वीर प्रभु की भक्ति कर, साता मिले विशेष।
रोक शोक सब शान्त हों, रहे कोई न शेष॥

(इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

मानस्तंभ के अर्घ्य

दोहा– जिनवर चरण सरोज में, करते विशद प्रणाम।
पुष्पाञ्जलि कर पूजते, पाने को शिव धाम॥

(अथ प्रथम वलयोपरि पुष्पाञ्जलिं छिपामि)

(सखी छन्द)

श्री महावीर जिन गाए, जो केवल ज्ञान जगाए।
सुर समवशरण बनवाए, मानस्तंभ श्रेष्ठ सजाए॥
है पूरब दिश सुखदाई, जिन बिम्ब पूजते भाई।
हम केवल ज्ञान जगाएँ, बश यही भावना भाएँ॥1॥

ॐ ह्रीं पूर्वदिक मानस्तम्भ स्थित चतुर्दिक जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

प्रभु क्षमा आदि गुण पाए, संयम धारी कहलाए।
अपने सब कर्म नशाए, तीर्थंकर पदवी पाए॥
है दक्षिण दिश सुखदाई, जिन बिम्ब पूजते भाई।
हम केवल ज्ञान जगाएँ, बश यही भावना भाएँ॥2॥

ॐ ह्रीं दक्षिणदिक् मानस्तम्भ स्थित चतुर्दिक जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

प्रभु रत्नत्रय को पाए, निज आतम ध्यान लगाए।
बनके प्रभु अन्तर्यामी, जो हुए मोक्ष पथगामी॥
है पश्चिम दिश सुखदाई, जिन बिम्ब पूजते भाई।
हम केवल ज्ञान जगाएँ, बश यही भावना भाएँ॥3॥

ॐ ह्रीं पश्चिमदिक् मानस्तम्भ स्थित चतुर्दिक जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

प्रभु अतिशय चौंतिस पाते, सुर प्रातिहार्य प्रगटाते।
जो अनन्त चतुष्टय धारी, बनते हैं शिव भरतारी॥
है उत्तर दिश सुखदाई, जिन बिम्ब पूजते भाई।
हम केवल ज्ञान जगाएँ, बश यही भावना भाएँ॥4॥

ॐ ह्रीं उत्तरदिक् मानस्तम्भ स्थित चतुर्दिक जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

श्री महावीर का भाई, है समवशरण सुखदायी।
हैं मानस्तंभ निराले, जो मान गलाने वाले॥
हैं चतुर्दिशा सुखदाई, जिन बिम्ब पूजते भाई।
हम केवल ज्ञान जगाएँ, बश यही भावना भाएँ॥

ॐ ह्रीं मानस्तम्भ स्थित चतुर्दिक जिनबिम्बेभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्व. स्वाहा।

समवशरण भूमियों के अर्घ्य

दोहा– समवशरण में भूमियाँ, सोहें अष्ट महान।
पुष्पाञ्जलि के साथ हम, करते हैं गुणगान॥

॥अथ प्रथम कोष्ठोपरि पुष्पाञ्जलिं छिपामी॥

चैत्य भूमि

महावीर जिन मंगलकारी, भवि जीवों के संकटहारी।
समवशरण में जिनगृह गाए, यहाँ पूजने को हम आए॥1॥

ॐ ह्रीं चतुर्दिश चैत्यभूमि जिनालय संयुक्त-समवशरणस्थित श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

खातिका भूमि

महावीर जिन कर्म नशाए, पावन केवल ज्ञान जगाए।
समवशरण है मंगलकारी, भूमि खातिका है मनहारी॥2॥

ॐ ह्रीं खातिका भूमि संयुक्त-समवशरणस्थित श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लता भूमि

लता भूमि है अतिशयकारी, भवि जीवों की है उपकारी।
महावीर जिनवर कहलाए, समवशरण में शोभा पाए॥3॥

ॐ ह्रीं लता भूमि संयुक्त-समवशरणस्थित श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

उपवन भूमि

महावीर जी ज्ञान जगाए, समवशरण में शोभा पाए।
तरु अशोक पूरब में पाए, चैत्य पूजने को हम आए॥I॥

ॐ ह्रीं उपवन भूमि मध्ये तरु अशोकवृक्ष परिसंयुक्त-समवशरणस्थित श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्व अमंगल हरने वाले, तीर्थंकर जिन रहे निराले।
सप्तछद तरु दक्षिण गाए, चैत्य पूजने को हम आए॥II॥

ॐ ह्रीं उपवन भूमि मध्ये सप्तछद वृक्ष परिसंयुक्त-समवशरणस्थित श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नाम मंत्र गाया शुभकारी, महावीर का अतिशयकारी।
चम्पक वन पश्चिम में पाए, चैत्य पूजने को हम आए॥III॥

ॐ ह्रीं उपवन भूमि मध्ये चम्पक वृक्ष परिसंयुक्त-समवशरणस्थित श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दुखहर्ता जिन वीर कहाए, जिनने सबके कष्ट मिटाए।
आम्र सुवन उत्तर में गाए, चैत्य पूजने को हम आए॥IV॥

ॐ ह्रीं उपवन भूमि मध्ये आम्र वृक्ष परिसंयुक्त-समवशरणस्थित श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उपवन भू चौथी कहलाए, चैत्य वृक्ष चउ दिश में गाए।
चैत्य पूजते हम मनहारी, बनें मोक्ष के हम अधिकारी॥4॥

ॐ ह्रीं उपवन भूमि मध्ये परिसंयुक्त-समवशरणस्थित श्री महावीर जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ध्वज भूमि

विघ्न निवारी जिनवर गाए, महावीर जी आप कहाए।
ध्वज भूमी युत शोभा पाते, समवशरण हम पूज रचाते॥5॥

ॐ ह्रीं ध्वज भूमि मध्ये आम्र वृक्ष परिसंयुक्त-समवशरणस्थित श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कल्पवृक्ष भूमि में सिद्धार्थ वृक्ष

(सखी छन्द)

प्रभु महावीर कहलाए, जो केवल ज्ञान जगाए।
तरुवर नमेरू के गाए, जिन चैत्य पूजने आए॥I॥

ॐ ह्रीं कल्पवृक्ष भूमि सिद्धार्थ वृक्ष-परिसंयुक्त समवशरणस्थित श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है समवशरण सुखदायी, श्री वीर प्रभू का भाई।
मन्दार तरू तल गाए, जिन चैत्य पूजने आए॥II॥

ॐ ह्रीं कल्पवृक्ष भूमि मंदार वृक्ष-परिसंयुक्त समवशरणस्थित श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन वीर बली गुण धारी, जन-जन के संकटहारी।
तरु संतानक तल गाए, जिन चैत्य पूजने आए॥III॥

ॐ ह्रीं कल्पवृक्ष भूमि संतानक वृक्ष-परिसंयुक्त समवशरणस्थित श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री महावीर की वाणी, है जन-जन की कल्याणी।
तरु पारिजात तल पाए, जिन चैत्य पूजने आए॥IV॥

ॐ ह्रीं कल्पवृक्ष भूमि पारिजात वृक्ष-परिसंयुक्त समवशरणस्थित श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सिद्धार्थ चार दिश जानो, सिद्ध बिम्ब सु तरु के मानो।
शुभ मानस्तंभ बताए, जिन पूजा करने आए॥6॥

ॐ ह्रीं कल्पवृक्ष भूमि वृक्ष-परिसंयुक्त समवशरणस्थित श्री महावीर जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भवन भूमि (दोहा)

समवशरण में शोभते, महावीर भगवान।
नव स्तूपों में सुजिन, का करते गुणगान॥I॥

ॐ ह्रीं भवन भूमि प्रथम वीथिका संयुक्त-समवशरणस्थित श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवशरण में वीर जिन, गुण के रहे निधान।
नव स्तूपों में सुजिन, का करते गुणगान॥II॥

ॐ ह्रीं भवन भूमि द्वितीय वीथिका संयुक्त-समवशरणस्थित श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

केवल ज्ञानी वीर जिन, जग में हुए महान।
नव स्तूपों में सुजिन, का करते गुणगान॥III॥

ॐ ह्रीं भवन भूमि तृतीय वीथिका संयुक्त-समवशरणस्थित श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूज्य रहे जो लोक में, रहे गुणों की खान।
नव स्तूपों में सुजिन, का करते गुणगान॥IV॥

ॐ ह्रीं भवन भूमि चतुर्थ वीथिका संयुक्त-समवशरणस्थित श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नव-नव हैं स्तूप शुभ, प्रति गलि में शुभकार।
सिद्ध बिम्ब जग पूज्य हैं, महिमा अपरम्पार॥7॥

ॐ ह्रीं भवन भूमि वीथिका संयुक्त-समवशरणस्थित श्री महावीर जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री मण्डप भूमि

महावीर का समवशरण है, चार कोष का अपरम्पार।
बीस हजार सीड़ियों संयुत, जीव दर्श पाते शुभकार॥
दर्शन करके भव्य जीव शुभ, पाते हैं पावन श्रद्धान।
मोक्ष मार्ग के राही बनते, करते भाव सहित गुणगान॥8॥

ॐ ह्रीं श्री मण्डप भूमि संयुक्त-समवशरणस्थित श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

दोहा- अष्ट भूमियों की रही, महिमा अपरम्पार।
जिन की महिमा गा रहे, सुर नर ऋषि अनगार॥

ॐ ह्रीं अष्टभूमि संयुक्त-समवशरणस्थित श्री महावीर जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गंधकुटी के अर्घ्य

दोहा- गंध कुटी में शोभते, तीर्थंकर भगवान।
पुष्पाञ्जलि करके विशद, करते हम गुणगान॥

(द्वितीय कोष्ठोपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

प्रथम कटनी पर धर्मचक्र के अर्घ्य

(चौबोला छन्द)

समवशरण की प्रथम पीठ के, पूर्व दिशा में महति महान।
धर्मचक्र सर्वाण्ह यक्ष शुभ, सिर पर धारण करे प्रधान॥
तीर्थंकर के श्री विहार में, आगे चलता मंगलकार।
कोटि सूर्य की कांतीवाल, पूज रहे हम बारम्बार॥I॥

ॐ ह्रीं प्रथम पीठ पूर्वदिक् समवशरणस्थित श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवशरण की प्रथम पीठ पर, दक्षिण दिश में अतिशयकार।
धर्मचक्र सर्वाण्ह यक्ष शुभ, धारण करता है मनहार॥
तीर्थंकर के श्री विहार में, आगे चलता मंगलकार।
कोटि सूर्य की कांतीवाल, पूज रहे हम बारम्बार॥II॥

ॐ ह्रीं प्रथम पीठ दक्षिणदिक् समवशरणस्थित श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवशरण की प्रथम पीठ पर, दिशा रही पश्चिम की ओर।
धर्मचक्र सर्वाण्ह यक्ष ले, होता मन में भाव विभोर॥
तीर्थंकर के श्री विहार में, आगे चलता मंगलकार।
कोटि सूर्य की कांतिवाल, पूज रहे हम बारम्बार॥III॥

ॐ ह्रीं प्रथम पीठ पश्चिमदिक् समवशरणस्थित श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवशरण में प्रथम पीठ धर, उत्तर दिशा में जानो आप।
धर्मचक्र सर्वाण्ह यक्ष ले, हरता है सबके संताप॥
तीर्थंकर के श्री विहार में, आगे चलता मंगलकार।
कोटि सूर्य की कांतिवाल, पूज रहे हम बारम्बार॥IV॥

ॐ ह्रीं प्रथम पीठ उत्तरदिक् संयुक्त-समवशरणस्थित श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– धर्म चक्र जिनदेव के, समवशरण में चार।
चतुर्दिशा में शोभते, पूज्य सुमंगलकार॥1॥

ॐ ह्रीं प्रथम पीठ चतुर्दिश समवशरणस्थित श्री महावीर जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वितीय पीठ पर आठ-आठ ध्वज, जिन महिमा दिखलाएँ।
दस विध मंगल द्रव्य धूप घट, शोभा श्रेष्ठ बढ़ाएँ॥
फहराकर के उच्च ध्वजाएँ, यश गुण कीर्ति बढ़ावें।
जिन की पूजा करें भक्त जो, नित नव मंगल पावें॥2॥

ॐ ह्रीं द्वितीय पीठ समवशरणस्थित श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

तृतीय पीठ पे समवशरण में, गंध कुटी मनहारी।
रत्न जड़ित है कांतिमान जो, अतिशय महिमाकारी॥
घंटा झालर मंगल द्रव्यों, से जो सोहे भाई।
जिन भक्तों ने जो कुछ चाहा, वह वस्तू ही पाई॥3॥

ॐ ह्रीं तृतीय पीठ समवशरणस्थित श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

दोहा– गंध कुटी में शोभते, तीर्थंकर भगवान।
जिनका करते आज हम, भाव सहित गुणगान॥

ॐ ह्रीं तृतीय पीठ समवशरणस्थित श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

चौतीस अतिशय के अर्घ्य

दोहा– चौंतिश अतिशय पाए हैं, महावीर भगवान।
पुष्पाञ्जलि कर पूजते, करते हम गुणगान॥

(अथ तृतिय कोष्ठोपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपत्)

(केवलज्ञान के 10 अतिशय)

(अडिल्य छंद)

अतिशय जिनवर केवलज्ञान के दश कहे।
योजन शत् इक में सुभिक्षता ही रहे॥
केवलज्ञान का अतिशय, जिनवर पाए हैं।
सुर नर पशु चरणों में, शीश झुकाए हैं॥1॥

ॐ ह्रीं गव्यूति शत चतुष्टय सुभिक्षत्व घातिक्षयजातिशय धारक श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

केवल ज्ञानी होय, गमन नभ में करें।
प्रभु चले जिस ओर, देवगण अनुसरें।
केवलज्ञान का अतिशय, जिनवर पाए हैं।
सुर नर पशु चरणों में, शीश झुकाए हैं।।2।।

ॐ ह्रीं आकाश गमन घातिक्षय जातिशयधारक श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जिनवर का हो गमन सदा हितदाय जी।
तिस थानक नहिं कोय मारने पाय जी।।
केवलज्ञान का अतिशय, जिनवर पाए हैं।
सुर नर पशु चरणों में, शीश झुकाए हैं।।3।।

ॐ ह्रीं अदयाभाव घातिक्षय जातिशयधारक श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

सुर नर पशु जड़ कृत, उपसर्ग चऊ कहे।
इनकी बाधा प्रभु के, ऊपर नहीं रहे।।
केवलज्ञान का अतिशय, जिनवर पाए हैं।
सुर नर पशु चरणों में, शीश झुकाए हैं।।4।।

ॐ ह्रीं उपसर्गाभाव घातिक्षय जातिशयधारक श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

क्षुधा आदि की पीड़ा से, जग दुख सह्यो।
सो जिन कवलाहार जान, सब पर हर्यो।।
केवलज्ञान का अतिशय, जिनवर पाए हैं।
सुर नर पशु चरणों में, शीश झुकाए हैं।।5।।

ॐ ह्रीं कवलाहाराभाव घातिक्षय जातिशयधारक श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

समवशरण में, श्री जिनवर स्थित रहे।
पूर्व दिशा मुख होय, चतुर्दिक दिख रहे।।
केवलज्ञान का अतिशय, जिनवर पाए हैं।
सुर नर पशु चरणों में, शीश झुकाए हैं।।6।।

ॐ ह्रीं चर्तुमुखत्व घातिक्षय जातिशयधारक श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

प्राकृत संस्कृत सकल देश, भाषा कही।
सब विद्या अधिपत्य, सकल जानत सही।।
केवलज्ञान का अतिशय, जिनवर पाए हैं।
सुर नर पशु चरणों में, शीश झुकाए हैं।।7।।

ॐ ह्रीं सर्व विद्येश्वरत्व घातिक्षय जातिशयधारक श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

मूर्तिक तन पुद्गल के, अणु से बन रहयो।
पड़े नहीं छाया, महा अचरज भयो।।
केवलज्ञान का अतिशय, जिनवर पाए हैं।
सुर नर पशु चरणों में, शीश झुकाए हैं।।8।।

ॐ ह्रीं छाया रहित घातिक्षय जातिशय धारक श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जिनवर के नख केश, नाहिं वृद्धि करें।
ज्यों के त्यों ही रहें, प्रभु यह गुण करें।।
केवलज्ञान का अतिशय, जिनवर पाए हैं।
सुर नर पशु चरणों में, शीश झुकाए हैं।।9।।

ॐ ह्रीं समान नख केशत्व घातिक्षय जातिशय धारक श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

नेत्रों में टिमकार, केश भौं नहिं हिलें।
दृष्टि नाशा रहे, कोई हेतु मिलें।।
केवलज्ञान का अतिशय, जिनवर पाए हैं।
सुर नर पशु चरणों में, शीश झुकाए हैं।।10।।

ॐ ह्रीं अक्षस्पंद रहित घातिक्षय जातिशय धारक श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

(10 जन्म के अतिशय)

प्रभु अतिशय रूप सुपावें, लख कामदेव शर्मावें।
हे जिनवर! जग उपकारी, जन-जन के करुणाकारी।।11।।

ॐ ह्रीं अतिशय रूप सहजातिशयधारक श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

तन में सुगंध प्रभु पाए, नर नारी सुर हर्षाए।
हे जिनवर! जग उपकारी, जन-जन के करुणाकारी।।12।।

ॐ ह्रीं सुगंधित तन सहजातिशयधारक श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

तन में न स्वेद रहा है, यह अतिशय एक कहा है।
हे जिनवर! जग उपकारी, जन-जन के करुणाकारी॥13॥

ॐ ह्रीं स्वेद रहित सहजातिशयधारक श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

तन में मलमूत्र न होई, न रहे अशुद्धि कोई।
हे जिनवर! जग उपकारी, जन-जन के करुणाकारी॥14॥

ॐ ह्रीं नीहार रहित सहजातिशयधारक श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

हित मित प्रिय वचन उचारें, जीवों में करुणा धारें।
हे जिनवर! जग उपकारी, जन-जन के करुणाकारी॥15॥

ॐ ह्रीं हित मित प्रिय सहजातिशयधारक श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

प्रभु बल अतुल्य के धारी, है शक्ति जग से न्यारी।
हे जिनवर! जग उपकारी, जन-जन के करुणाकारी॥16॥

ॐ ह्रीं अतुल्य बल सहजातिशयधारक श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

है श्वेत रुधिर प्रभु तन में, वात्सल्य रहे जन-जन में।
हे जिनवर! जग उपकारी, जन-जन के करुणाकारी॥17॥

ॐ ह्रीं श्वेत रक्त सहजातिशयधारक श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

वसु लक्षण एक सहस तन, दर्शन कर हर्षित हो मन।
हे जिनवर! जग उपकारी, जन-जन के करुणाकारी॥18॥

ॐ ह्रीं सहस्राष्ट लक्षण सहजातिशयधारक श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

समचतुष्क पाए संस्थाना, तन हीनाधिक नहिं माना।
हे जिनवर! जग उपकारी, जन-जन के करुणाकारी॥19॥

ॐ ह्रीं समचतुष्क संस्थान सहजातिशयधारक श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

शुभ वज्रवृषभ कहलाए, प्रभु उत्तम संहनन पाए।
हे जिनवर! जग उपकारी, जन-जन के करुणाकारी॥20॥

ॐ ह्रीं वज्रवृषभनाराच संहनन सहजातिशयधारक श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

(14 देवकृत अतिशय)

है अर्ध मागधी भाषा, सुरकृत है शुभ परिभाषा।
जो है भविजन सुखकारी, यह देवों की बलिहारी॥
प्रभु चौदह अतिशय पाये, जो देवों कृत कहलाए।
हे तीर्थंकर! पदधारी, हम पूजा करें तुम्हारी॥21॥

ॐ ह्रीं सर्वार्धमागधी भाषा देवोपनीतातिशय धारक श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जीवों में मैत्री जागे, जिनभक्ति में मन लागे।
जो है भविजन सुखकारी, यह देवों की बलिहारी॥
प्रभु चौदह अतिशय पाये, जो देवों कृत कहलाए।
हे तीर्थंकर! पदधारी, हम पूजा करें तुम्हारी॥22॥

ॐ ह्रीं सर्वमैत्रीभाव देवोपनीतातिशय धारक श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

षट्ऋतु के फल फलते हैं, अरु फूल स्वयं खिलते हैं।
जो है भविजन सुखकारी, यह देवों की बलिहारी॥
प्रभु चौदह अतिशय पाये, जो देवों कृत कहलाए।
हे तीर्थंकर! पदधारी, हम पूजा करें तुम्हारी॥23॥

ॐ ह्रीं सर्वर्तुफलादि तरुपरिणाम देवोपनीतातिशय धारक श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

दर्पण सम भूमि चमकती, सूरज सी कांति दमकती।
जो है भविजन सुखकारी, यह देवों की बलिहारी॥
प्रभु चौदह अतिशय पाये, जो देवों कृत कहलाए।
हे तीर्थंकर! पदधारी, हम पूजा करें तुम्हारी॥24॥

ॐ ह्रीं आदर्श तल प्रतिमा देवोपनीतातिशय धारक श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

सुरभित शुभ वायु चलती, जन-जन की वृत्ति बदलती।
जो है भविजन सुखकारी, यह देवों की बलिहारी॥
प्रभु चौदह अतिशय पाये, जो देवों कृत कहलाए।
हे तीर्थंकर! पदधारी, हम पूजा करें तुम्हारी॥25॥

ॐ ह्रीं सुगंधित विहरण मनुगत वायुत्व देवोपनीतातिशय धारक श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

सब जग में आनंद छावे, हर प्राणी बहु सुख पावे।
जो है भविजन सुखकारी, यह देवों की बलिहारी॥
प्रभु चौदह अतिशय पाये, जो देवों कृत कहलाए।
हे तीर्थंकर! पदधारी, हम पूजा करें तुम्हारी॥26॥

ॐ ह्रीं सर्वानंद कारक देवोपनीतातिशय धारक श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

कंटक से रहित जमीं हो, दोषों की वहाँ कमी हो।
जो है भविजन सुखकारी, यह देवों की बलिहारी॥
प्रभु चौदह अतिशय पाये, जो देवों कृत कहलाए।
हे तीर्थंकर! पदधारी, हम पूजा करें तुम्हारी॥27॥

ॐ ह्रीं वायुकुमारोपशमति देवोपनीतातिशय धारक श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जो है भविजन सुखकारी, यह देवों की बलिहारी॥
नभ में गूंजे जयकारा, जीवों में सौख्य अपारा।
प्रभु चौदह अतिशय पाये, जो देवों कृत कहलाए।
हे तीर्थंकर! पदधारी, हम पूजा करें तुम्हारी॥28॥

ॐ ह्रीं सर्वार्धमागधी भाषा देवोपनीतातिशय धारक श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

हो गंधोदक की वृष्टि, सौभाग्य मई सब सृष्टि।
जो है भविजन सुखकारी, यह देवों की बलिहारी॥
प्रभु चौदह अतिशय पाये, जो देवों कृत कहलाए।
हे तीर्थंकर! पदधारी, हम पूजा करें तुम्हारी॥29॥

ॐ ह्रीं सर्वार्धमागधी भाषा देवोपनीतातिशय धारक श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

सुर पग तल कमल रचाते, प्रभु के गुण मंगल गाते।
जो है भविजन सुखकारी, यह देवों की बलिहारी॥
प्रभु चौदह अतिशय पाये, जो देवों कृत कहलाए।
हे तीर्थंकर! पदधारी, हम पूजा करें तुम्हारी॥30॥

ॐ ह्रीं चरण कमल तल रचित स्वर्णकमल देवोपनीतातिशय धारक श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

हो गगन सुनिर्मल भाई, यह प्रभु की है प्रभुताई।
जो है भविजन सुखकारी, यह देवों की बलिहारी॥
प्रभु चौदह अतिशय पाये, जो देवों कृत कहलाए।
हे तीर्थंकर! पदधारी, हम पूजा करें तुम्हारी॥31॥

ॐ ह्रीं शरद कमल वन्निर्मल गगन देवोपनीतातिशय धारक श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

निर्मल हो सभी दिशाएँ, जिनवर जह शोभा पाएँ।
जो है भविजन सुखकारी, यह देवों की बलिहारी॥
प्रभु चौदह अतिशय पाये, जो देवों कृत कहलाए।
हे तीर्थंकर! पदधारी, हम पूजा करें तुम्हारी॥32॥

ॐ ह्रीं सर्वानंदकारक देवोपनीतातिशय धारक श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

सुर धर्मचक्र ले आवे, आगे जो चलता जावे।
जो है भविजन सुखकारी, यह देवों की बलिहारी॥
प्रभु चौदह अतिशय पाये, जो देवों कृत कहलाए।
हे तीर्थंकर! पदधारी, हम पूजा करें तुम्हारी॥33॥

ॐ ह्रीं धर्मचक्र चतुष्टय देवोपनीतातिशय धारक श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

वसु मंगल द्रव्य सुहावन, लाते हैं सुर अति पावन।
जो है भविजन सुखकारी, यह देवों की बलिहारी॥
प्रभु चौदह अतिशय पाये, जो देवों कृत कहलाए।
हे तीर्थंकर! पदधारी, हम पूजा करें तुम्हारी॥34॥

ॐ ह्रीं अष्ट मंगल द्रव्य देवोपनीतातिशय धारक श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

दोहा– चौंतिस अतिशय पाए हैं, महावीर भगवान।
विशद ज्ञान धारी प्रभू, पाए पद निर्वाण॥

ॐ ह्रीं चतु:त्रिंशत अतिशय प्राप्त श्री महावीर जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

(अष्ट प्रातिहार्य के अर्घ्य)

दोहा– प्रातिहार्य वसु प्राप्त कर, बने श्री के नाथ।
महावीर प्रभु के चरण, झुका रहे हम नाथ॥

(चतुर्थ कोष्ठोपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपत्)

प्रातिहार्य जुत समवशरण की, शोभा दर्शाई।
तरु अशोक है, शोक निवारक, भविजन सुखदाई॥
जिनेश्वर पूजों हों भाई।
समवशरण श्री महावीर का, है अतिशयदायी॥1॥

ॐ ह्रीं अशोक तरु सत्प्रातिहार्य सहित श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

महाभक्ति वश सुरपुरवासी, पुष्प लिए भाई।
पुष्पवृष्टि करते हैं मिलकर, मन में हर्षाई॥
जिनेश्वर पूजों हों भाई।
समवशरण श्री महावीर का, है अतिशयदायी॥2॥

ॐ ह्रीं सुरपुष्प वृष्टि सत्प्रातिहार्य सहित श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

कुपथ विनाशक सुपथ प्रकाशक, शुभ मंगलदाई।
दिव्य ध्वनि सुनते नर सुर पशु, हिरदय हर्षाई॥
जिनेश्वर पूजों हों भाई।
समवशरण श्री महावीर का, है अतिशयदायी॥3॥

ॐ ह्रीं दिव्य ध्वनि सत्प्रातिहार्य सहित श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अतिशय अनुपम धवल मनोहर, सुंदर सुखदाई।
चौंसठ चंवर ढुरें प्रभु आगे, अति शोभा पाई॥
जिनेश्वर पूजों हों भाई।
समवशरण श्री महावीर का, है अतिशयदायी॥4॥

ॐ ह्रीं चतुःषष्टि चामर सत्प्रातिहार्य सहित श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

परमवीर अतिवीर जिनेश्वर, जगत पूज्य भाई।
रत्न जड़ित अति शोभा मण्डित, सिंहासन पाई॥
जिनेश्वर पूजों हों भाई।
समवशरण श्री महावीर का, है अतिशयदायी॥5॥

ॐ ह्रीं सिंहासन सत्प्रातिहार्य सहित श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

महत् ज्योति जिनवर के तन की, अतिशय चमकाई।
प्रभा पुंज युत प्रातिहार्य शुभ, भामण्डल पाई॥
जिनेश्वर पूजों हों भाई।
समवशरण श्री महावीर का, है अतिशयदायी॥6॥

ॐ ह्रीं भामण्डल सत्प्रातिहार्यातिशय सहित श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

हर्षभाव से सुरगण मिलकर, बाजे बजवाई।
देव दुंदुभि प्रातिहार्य शुभ, श्री जिनवर पाई॥
जिनेश्वर पूजों हों भाई।
समवशरण श्री महावीर का, है अतिशयदायी॥7॥

ॐ ह्रीं देवदुंदुभि सत्प्रातिहार्य सहित श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जड़े कनक नग छत्र मणीमय, रत्नमाल लपटाई।
तीन लोक के स्वामी हों ज्यों, क्षत्रत्रय पाई॥
जिनेश्वर पूजों हों भाई।
समवशरण श्री महावीर का, है अतिशयदायी॥8॥

ॐ ह्रीं छत्रत्रय सत्प्रातिहार्य सहित श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

दोहा– प्रगटाते हैं देवगण, प्रातिहार्य शुभ आठ।
तीर्थंकर भगवान के, होते ऊँचे ठाठ॥

ॐ ह्रीं अष्ट प्रातिहार्य सहित श्री महावीर जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्व. स्वाहा।

(अनन्त चतुष्टय के अर्घ्य)

दोहा– अनन्त चतुष्टय प्राप्त कर, पाए केवल ज्ञान।
शिव पथ के राही बने, महावीर भगवान॥

(पञ्चम कोष्ठोपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपत्)

दुष्ट महाबली मोह कर्म का, नाश किए भाई।
निज अनुभव प्रत्यक्ष किए जिन, समकित गुण पाई॥
जिनेश्वर पूजों हों भाई।
समवशरण श्री महावीर का, है अतिशयदायी॥1॥

ॐ ह्रीं दर्शन गुण प्राप्त श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

उभय लोक षट् द्रव्य अनंता, युगपद दर्शाई।
निरावरण स्वाधीन अलौकिक, विशद ज्ञान पाई।।
जिनेश्वर पूजों हों भाई।
समवशरण श्री महावीर का, है अतिशयदायी।।2।।

ॐ ह्रीं अनंतज्ञान गुण प्राप्त श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

चक्षु दर्शनावरण आदि सब, घातक कर्म नशाई।
सकल ज्ञेय युगपद अवलोके, सद् दर्शन पाई।।
जिनेश्वर पूजों हों भाई।
समवशरण श्री महावीर का, है अतिशयदायी।।3।।

ॐ ह्रीं अनंत सुख प्राप्त सहित श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अंतराय कर्मों ने शक्ती, आतम की खोई।
ते सब घात किये जिन स्वामी, बल असीम पाई।।
जिनेश्वर पूजों हों भाई।
समवशरण श्री महावीर का, है अतिशयदायी।।4।।

ॐ ह्रीं अनंत वीर्य गुण सहित श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

दोहा– महावीर भगवान की, महिमा अपरम्पार।
अनन्त चतुष्टय प्राप्त कर, पाए भवदधि पार।।

ॐ ह्रीं अनंत अनन्त चतुष्टय प्राप्त श्री महावीर जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अठारह दोष रहित जिन के अर्घ्य

दोहा– महावीर भगवान हैं, अठरह दोष विहीन।
जिनकी अर्चा में विशद, रहें हमेशा लीन।।

(अथ षष्ठम कोष्ठोपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

(चौपाई)

केवलज्ञानी होने वाले, क्षुधा वेदना खोने वाले।
दोष अठारह के हैं नाशी, सिद्ध शिला के होते वासी।।1।।

ॐ ह्रीं क्षुधादोष रहिताय श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

तृषा दोष भी न रह पाए, जो भी केवलज्ञान जगाए।
दोष अठारह के हैं नाशी, सिद्ध शिला के होते वासी।।2।।

ॐ ह्रीं तृषादोष रहिताय श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जन्म दोष भी न रह पाए, जो भी केवलज्ञान जगाए।
दोष अठारह के हैं नाशी, सिद्ध शिला के होते वासी।।3।।

ॐ ह्रीं जन्मदोष रहिताय श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जरा दोष की होती हानी, बन जाते जो केवल ज्ञानी।
दोष अठारह के हैं नाशी, सिद्ध शिला के होते वासी।।4।।

ॐ ह्रीं जरादोष रहिताय श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

विस्मय दोष रहे न भाई, केवलज्ञानी के दुखदायी।
दोष अठारह के हैं नाशी, सिद्ध शिला के होते वासी।।5।।

ॐ ह्रीं विस्मयदोष रहिताय श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अरति दोष उनके भी खोवें, केवल ज्ञानी जो भी होवें।
दोष अठारह के हैं नाशी, सिद्ध शिला के होते वासी।।6।।

ॐ ह्रीं अरतिदोष रहिताय श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

खेद दोष के होते त्यागी, केवल ज्ञानी बहु बड़भागी।
दोष अठारह के हैं नाशी, सिद्ध शिला के होते वासी।।7।।

ॐ ह्रीं खेददोष रहिताय श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

रोग देह में कभी न आवे, जो भी केवल ज्ञान जगावे।
दोष अठारह के हैं नाशी, सिद्ध शिला के होते वासी।।8।।

ॐ ह्रीं रोगदोष रहिताय श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

मन में शोक कभी न लाते, जो नर केवल ज्ञान जगाते।
दोष अठारह के हैं नाशी, सिद्ध शिला के होते वासी।।9।।

ॐ ह्रीं शोकदोष रहिताय श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

मद उनके कैसे रह पावे, जो भी केवल ज्ञान जगावे।
दोष अठारह के हैं नाशी, सिद्ध शिला के होते वासी।।10।।

ॐ ह्रीं मददोष रहिताय श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

मोह दोष के हैं वे नाशी, जो हैं केवलज्ञानी प्रकाशी।
दोष अठारह के हैं नाशी, सिद्ध शिला के होते वासी।।11।।

ॐ ह्रीं मोहदोष रहिताय श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

भय का क्षय उनके हो जावे, केवल ज्ञान मुनि प्रगटावे।
दोष अठारह के हैं नाशी, सिद्ध शिला के होते वासी॥12॥
ॐ ह्रीं भयदोष रहिताय श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

निद्रा दोष त्यागते स्वामी, केवलज्ञानी अन्तर्यामी।
दोष अठारह के हैं नाशी, सिद्ध शिला के होते वासी॥13॥
ॐ ह्रीं निद्रादोष रहिताय श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

चिंता उनके हृदय न आवे, जो तीर्थंकर पदवी पावे।
दोष अठारह के हैं नाशी, सिद्ध शिला के होते वासी॥14॥
ॐ ह्रीं चिंतादोष रहिताय श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

स्वेद रहे न तन में कोई, जिनने भव से मुक्ती पाई।
दोष अठारह के हैं नाशी, सिद्ध शिला के होते वासी॥15॥
ॐ ह्रीं स्वेददोष रहिताय श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

राग-दोष उनका नश जाए, मुनिवर केवलज्ञान जगाए।
दोष अठारह के हैं नाशी, सिद्ध शिला के होते वासी॥16॥
ॐ ह्रीं रागदोष रहिताय श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

मन में द्वेष कभी न लावें, विशद ज्ञान जो मुनि प्रगटावें।
दोष अठारह के हैं नाशी, सिद्ध शिला के होते वासी॥17॥
ॐ ह्रीं द्वेषदोष रहिताय श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

मरण दोष के होते नाशी, केवल ज्ञानी शिवपुर वासी।
दोष अठारह के हैं नाशी, सिद्ध शिला के होते वासी॥18॥
ॐ ह्रीं मरणदोष रहिताय श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

बाईस परीषह जय के धारी, दोष अठारह के संहारी।
महावीर की महिमा गाते, पद में सादर शीश झुकाते॥
ॐ ह्रीं अष्टादश दोषरहिताय श्री महावीर जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्व. स्वाहा।

गणधरों के अर्घ्य

दोहा– महावीर भगवान के, ग्यारह रहे गणेश।
शिव पथ के राही बने, धार दिगम्बर भेष॥

(सप्तम कोष्ठोपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

(चाल छन्द)

गौतम 'इन्द्र भूति' कहलाए, गणधर वीर के पहले गाए।
पूज रहे जिनके पद भाई, बनें मोक्ष के हम अनुयायी॥1॥
ॐ ह्रीं इन्द्रभूति गौतम गणधर वंदित श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्य निर्व. स्वाहा।

'नागोत्तम' गणधर जी गाए, जो अतिशय महिमा दिखलाए।
पूज रहे जिनके पद भाई, बनें मोक्ष के हम अनुयायी॥2॥
ॐ ह्रीं नागोत्तम गणधर वंदित श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्य निर्व. स्वाहा।

'महादत्त' है नाम निराला, गणधर का दुख हरने वाला।
पूज रहे जिनके पद भाई, बनें मोक्ष के हम अनुयायी॥3॥
ॐ ह्रीं महादत्त गणधर वंदित श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्य निर्व. स्वाहा।

गणधर 'सुदत्त केश' कहलाए, महावीर की महिमा गाए।
पूज रहे जिनके पद भाई, बनें मोक्ष के हम अनुयायी॥4॥
ॐ ह्रीं सुदत्त केश गणधर वंदित श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्य निर्व. स्वाहा।

गणधर रहे 'सकोमल' भाई, जिनकी फैली जग प्रभुताई।
पूज रहे जिनके पद भाई, बनें मोक्ष के हम अनुयायी॥5॥
ॐ ह्रीं सकोमल गणधर वंदित श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

हैं 'बहुदत्त' नाम के धारी, गणधर कहलाए अविकारी।
पूज रहे जिनके पद भाई, बनें मोक्ष के हम अनुयायी॥6॥
ॐ ह्रीं बहुदत्त गणधर वंदित श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

'उर्द्धलांग' कहलाए स्वामी, गणधर बने मोक्ष पथ गामी।
पूज रहे जिनके पद भाई, बनें मोक्ष के हम अनुयायी॥7॥
ॐ ह्रीं उर्द्धलांग गणधर वंदित श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्य निर्व. स्वाहा।

गणधर जी 'मददत्त' कहाए, विनय मान के ऊपर पाए।
पूज रहे जिनके पद भाई, बनें मोक्ष के हम अनुयायी॥8॥
ॐ ह्रीं मददत्त गणधर वंदित श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्य निर्व. स्वाहा।

'गौतम' गणधर जग में नामी, कहलाए जो अन्तर्यामी।
पूज रहे जिनके पद भाई, बनें मोक्ष के हम अनुयायी।।9।।
ॐ ह्रीं गौतम गणधर वंदित श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

जिन्हें 'सरोत्तम' कहते प्राणी, गणधर बने आप सद्ज्ञानी।
पूज रहे जिनके पद भाई, बनें मोक्ष के हम अनुयायी।।10।।
ॐ ह्रीं सरोत्तम गणधर वंदित श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्य निर्व. स्वाहा।

आप 'निरोत्तम' शुभ कहलाए, नहीं समानता कोई पाए।
पूज रहे जिनके पद भाई, बनें मोक्ष के हम अनुयायी।।11।।
ॐ ह्रीं निरोत्तम गणधर वंदित श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्य निर्व. स्वाहा।

महावीर के गणधर जानो, ग्यारह हुए श्रेष्ठ यह मानो।
पूज रहे जिनके पद भाई, बनें मोक्ष के हम अनुयायी।।12।।
ॐ ह्रीं एकादश गणधर वंदित श्री महावीर जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सप्त प्रकार के ऋषि

दोहा– महावीर भगवान के, ऋषिवर सात प्रकार।
पूज रहे हम भाव से, पाने भव दधि पार।।
(अष्ठम कोष्ठोपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

(चौपाई छन्द)

पावन तीन सौ 'पूरब धार', समवशरण में मुनि अविकार।
महावीर के गाए साथ, जिनके चरण झुकाएँ माथ।।1।।
ॐ ह्रीं श्री महावीर स्वामिन: त्रयशत पूर्वधर ऋषिभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नव हजार नौ शतक मुनीश, 'शिक्षक' गाए जैन ऋषीश।
महावीर के गाए साथ, जिनके चरण झुकाएँ माथ।।2।।
ॐ ह्रीं श्री महावीर स्वामिन: नवसहस्र नवशत शिक्षक ऋषिभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तेरह शत मुनि 'अवधि ज्ञान', पाने वाले हुए महान।
महावीर के गाए साथ, जिनके चरण झुकाएँ माथ।।3।।
ॐ ह्रीं श्री महावीर स्वामिन: त्रयोदश शत अवधि ज्ञानधर ऋषिभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सप्त शतक मुनि केवल ज्ञान, पाकर किए आत्म कल्याण।
महावीर के गाए साथ, जिनके चरण झुकाएँ माथ।।4।।
ॐ ह्रीं श्री महावीर स्वामिन: सप्त शत केवल ज्ञानधर ऋषिभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

'विक्रिया ऋद्धी' धार ऋषीश, नौ सौ गाये जैन मुनीश।
महावीर के गाए साथ, जिनके चरण झुकाएँ माथ।।5।।
ॐ ह्रीं श्री महावीर स्वामिन: नवशत विक्रिया ऋद्धीधर ऋषिभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

साढ़े पाँच सौ जिन मुनिराज 'विपुल मती' ज्ञानी ऋषिराज।
महावीर के गाए साथ, जिनके चरण झुकाएँ माथ।।6।।
ॐ ह्रीं श्री महावीर स्वामिन: पञ्चशत विपुल मति ज्ञानधर ऋषिभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चार सौ 'वादी मुनि' शुभकार, पावन बतलाए अनगार।
महावीर के गाए साथ, जिनके चरण झुकाएँ माथ।।7।।
ॐ ह्रीं श्री महावीर स्वामिन: चतु:शत वादी ऋषिभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवशरण में मंगलकार, ऋषिवर गाए सात प्रकार।
महावीर के गाए साथ, जिनके चरण झुकाएँ माथ।।8।।
ॐ ह्रीं श्री महावीर स्वामिन: चतुर्दश सहस्र सर्व ऋषिभ्य: पूर्णार्घ्यं निर्व. स्वाहा।

महाअर्घ्य

दिव्य देशना झेला करते, जिन की जग हितकारी।
चार ज्ञान पाते हैं अनुपम, होते ऋद्धीधारी।।
भाव सहित पूजा करते हम, अनुपम अर्घ्य चढ़ा के।
करते है गुणगान प्रभु का, हर्ष हर्ष गुण गाके।।
ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री महावीर जिनेन्द्राय महाअर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जाप्य–ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री महावीर जिनेन्द्राय नम:।

जयमाला

दोहा– समवशरण में वीर के, आते बालाबाल।
श्री जिनेन्द्र की आज हम, गाते हैं जयमाल॥

(ज्ञानोदय छन्द)

जय जय तीर्थंकर वर्धमान, जो आत्म शांति के दाता हैं।
जय सन्मति वीर जिनेश कहे, जो सम्यक् बुद्धि प्रदाता हैं॥
अतिवीर आप कहलाते हैं, जो मुक्ती मार्ग विधाता हैं।
जय महावीर तीर्थंकर जिन, देने वाले सुख साता हैं॥
फिर अणुव्रत धारण कर क्रम से, नर देव भवों में उपजाया।
दश भव पूरब में जिन तुमने, सम्बोधन ऋषियों से पाया॥
निज जीवन का उत्थान किया, जग को सन्मार्ग दिखाया है।
जग जीवों ने तव दर्शन कर, पावन श्रद्धान जगाया है॥
शुभ चैत शुक्ल की तेरस को, सिद्धारथ के गृह जन्म लिया।
वह मात पिता जननी आदिक, सबका ही तुम उद्धार किया॥
सुदि मगसिर तिथि दसमी को प्रभु ने, पावन संयम को पाया।
वैशाख शुक्ल की दशमी को, तुम केवल ज्ञान को प्रगटाया॥
फिर धन कुबेर ने इन्द्राज्ञा से, शुभ समवशरण था बनवाया।
सौधर्म इन्द्र परिवार सहित, चरणों में नत होकर आया॥
मानस्तंभ हैं चार दिशा शुभ, जिन बिम्ब चतुर्दिश में गाए।
हैं आठ भूमियाँ पावनतम, अरु चार कोट भी बतलाए॥
प्रासाद चैत्य शुभ खाति भूमि, अरु लता भूमि उपवन गाई।
ध्वज भूमि तथा सुरवृक्ष भवन, श्री मण्डप भूमी बतलाई॥
है गंध कुटी पर कमलासन, जिस पर जिन अधर विराज रहे।
शुभ ॐकार मयी दिव्य ध्वनि, जिसको गणधर जी झेल रहे॥

दोहा– समवशरण में वीर जिन, देते सद् उपदेश।
पाके शिव राही बनें, हे प्रभु! वीर जिनेश॥

ॐ ह्रीं समवशरणस्थित श्री महावीर जिनेन्द्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्व. स्वाहा।

दोहा– समवशरण में शोभते, महावीर भगवान।
जिनके गुण गाते 'विशद', पाने पद निर्वाण॥

॥इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्॥

श्री महावीर चालीसा

दोहा– सिद्ध और अरिहंत का, है सुखकारी नाम।
आचार्योपाध्याय साधु के, करते चरण प्रणाम॥
वर्धमान सन्मति तथा, वीर और अतिवीर।
महावीर की वन्दना, से बदलते तकदीर॥

(चौपाई)

जय-जय वर्धमान जिन स्वामी, शांति मनोहर छवि है नामी।
तीर्थंकर प्रकृति के धारी, सर्व जहाँ में मंगलकारी॥
पुरूषोत्तम विमान से आए, माँ को सोलह स्वप्न दिखाए।
राजा सिद्धारथ कहलाए, कुण्डलपुर के भूप कहाए॥
माता त्रिशला के उर आए, नाथ वंश को सूर्य कलाए।
षष्ठी शुक्ल तेरस दिन आया, जन्म प्रभु ने जिस दिन पाया।
नक्षत्र उत्तरा फाल्गुन जानो, अन्तिम पहर रात का मानो॥
इन्द्र तभी ऐरावत लाया, पाण्डुक शिला पर न्हवन कराया।
प्रभु के पद में शीश झुकाया, पग में चिह्न शेर का पाया॥
वर्द्धमान तब नाम बताया, जयकारे से गगन गुँजाया।
पलना प्रभु का मात झुलाये, ऋद्धिधारी मुनिवर आए॥
मन में प्रश्न मुनि के आया, जिसका समाधान न पाया।
देख प्रभु को हल कर लीन्हा, सन्मति नाम प्रभु का दीन्हा॥
मित्रों संग क्रीड़ा को आए, सभी वीरता लख हर्षाए।
देव परीक्षा लेने आया, नाग का उसने रूप बनाया॥
भागे मित्र सभी भय खाये, किन्तु प्रभु नहीं घरबाए।
पैर की ठोकर सिर में मारी, देव तभी चीखा अति भारी॥
उसने चरणों ढ़ोक लगाया, वीर नाम प्रभु का बतलाया
युवा अवस्था प्रभु जी पाए, करके सैर नगर में आए॥
हाथी ने उत्पात मचाए, मद उसका प्रभु पूर्ण नशाए।
प्रभु अतिवीर नाम को पाए, सभी प्रशंसा कर हर्षाए॥
बाल ब्रह्मचारी कहलाए, तीस वर्ष में दीक्षा पाए।

जाति स्मरण प्रभु को आया, तब मन में वैराग्य समाया॥
माघ कृष्ण दशमी दिन पाया, नक्षत्र उत्तरा फाल्गुन गाया।
तृतीया भक्त प्रभु जी पाए, दीक्षा धर एकाकी आए॥
स्वर्ण रंग प्रभु का शुभ पाया, सप्त हाथ अवगाहन पाया।
प्रभु नाथ वन में फिर आए, साल तरू तल ध्यान लगाए॥
कामदेव रति वन में आए, जग को जीता ऐसा गाए।
रति ने प्रभु का दर्शन पाया, कामदेव से वचन सुनाया॥
इन्हें जीत पाए क्या स्वामी, नग्न खड़े हो शिवपथ गामी।
प्रभु को ध्यान से खूब डिगाया, किन्तु उन्हें डिगा न पाए॥
कामदेव पद शीश झुकाया, महावीर तव नाम बताया।
दशें शुक्ल वैसाख बखानी, हुए प्रभुजी केवलज्ञानी॥
ऋजुकूला का तीर बताया, शाल वृक्ष वन खण्ड कहाया।
समवशरण इक योजन जानो, योग निवृत्ति अनुपम मानो॥
कार्तिक कृष्ण अमावस पाए, महावीर जिन मोक्ष सिधाए।
प्रातःकाल रहा शुभकारी, ग्यारह गणधर थे मनहारी॥
गौतम गणधर प्रथम कहाए, नाम इन्द्रभूति शुभ पाए।
गणधरजी ने ध्यान लगाया, सांय केवलज्ञान जगाया॥
प्रभु शासन नायक कहलाए, श्रेष्ठ सिद्धान्त लोक में छाए।
प्रतिमाएँ हैं अतिशयकारी, वीतरागमय मंगलकारी।
चाँदनपुर महिमा दिखलाए, टीले में गौ दूध झराए।
ग्वाले के मन अचरज आया, उसने टीले को खुदवाया॥
वीर प्रभु के दर्शन पाए, लोग सभी मन में हर्षाए।
पावागिरि ऊन कहलाए, वहाँ भी कई अतिशय दिखलाए॥
यही भावना रही हमारी, जनता सुखमय होवे सारी॥
चरण कमल में हम सिर नाते, 'विशद' भाव से शीष झुकाते।

दोहा– चालीसा चालीस दिन, दिन में चालिस बार।
पढ़ने से सुख-शांति हो, मिले मोक्ष का द्वार॥

श्री महावीर स्वामी की आरती

(तर्ज : कंचन की थाली लाया...)

रत्नों के दीप जलाए, चरणों में तेरे आए।
भावों से करने थारी आरती, हो वीरा हम सब उतारे तेरी आरती॥
कुण्डलपुर में जन्म लिए प्रभु, मात पिता हर्षाए।
धन कुबेर ने खुश होकर के, दिव्य रत्न वर्षाए॥
इन्द्र भी महिमा गावे, भक्ति से शीश झुकावे।
भवि जन करते हैं तेरी आरती, हो वीरा...॥1॥
चैत शुक्ल की त्रयोदशी को, जन्म जयन्ती आवे।
नगर-नगर के नर-नारी सब, मन में हर्ष बढ़ावें॥
प्रभु को रथ पे बैठावें, नाचे गावें हर्षावें।
सब मिल उतारे थारी आरती...॥2॥
मार्ग शीर्ष कृष्णा तिथि दशमी, तुमने दीक्षा धारी।
युवा अवस्था में संयम धर, हुए आप अनगारी॥
आतम का ध्यान लगाया, कर्मों को आप नशाया।
श्रावक करते है थारी आरती...हो वीरा॥3॥
दशें शुक्ल वैशाख माह में, केवल ज्ञान जगाये।
कार्तिक कृष्ण अमावश को प्रभु, 'विशद' मोक्ष पद पाए॥
पावापुर है मनहारी, सिद्ध भूमि है–प्यारी।
जिनबिम्बों की करते हम आरती हो वीरा...॥4॥

समवशरण की आरती

आज करें हम समवशरण की, आरति मंगलकारी।
घृत के दीप जलाकर लाए, प्रभुवर के दरबार॥
हो जिनवर, हम सब उतारें तेरी आरती।
कर्म घातिया नाश किए प्रभु, केवलज्ञान जगाया।
अनन्त चतुष्टय पाए तुमने, सुख अनन्त को पाया॥
हो जिनवर, हम सब उतारें तेरी आरती॥1॥
इन्द्र की आज्ञा पाकर भाई, धन कुबेर यहाँ आया।
स्वर्ण और रत्नों से सज्जित, समवशरण बनवाया॥
हो जिनवर, हम सब उतारें तेरी आरती॥2॥
स्वर्ग से आकर इन्द्रों ने शुभ, प्रातिहार्य प्रगटाए।
प्रभु की भक्ति अर्चा करके, सादर शीश झुकाए॥
हो जिनवर, हम सब उतारें तेरी आरती॥3॥
जिनबिम्बों से सज्जित अनुपम, अष्ट भूमियाँ जानो।
श्रेष्ठ सभाएँ सुर नर मुनि की, विस्मयकारी मानो॥
हो जिनवर, हम सब उतारें तेरी आरती॥4॥
ॐकारमय दिव्य देशना, अतिशय प्रभु सुनाए।
'विशद' पुण्य का योग मिला यह, प्रभु के दर्शन पाए॥
हो जिनवर, हम सब उतारें तेरी आरती॥5॥

प.पू. साहित्य रत्नाकर आचार्य श्री 108 विशदसागर जी महाराज द्वारा रचित पूजन महामंडल विधान साहित्य सूची

1. श्री आदिनाथ महामण्डल विधान
2. श्री अजितनाथ महामण्डल विधान
3. श्री संभवनाथ महामण्डल विधान
4. श्री अभिनन्दननाथ महामण्डल विधान
5. श्री सुमतिनाथ महामण्डल विधान
6. श्री पद्मप्रभ महामण्डल विधान
7. श्री सुपार्श्वनाथ महामण्डल विधान
8. श्री चन्द्रप्रभू महामण्डल विधान
9. श्री पुष्पदंत महामण्डल विधान
10. श्री शीतलनाथ महामण्डल विधान
11. श्री श्रेयांसनाथ महामण्डल विधान
12. श्री वासुपूज्य महामण्डल विधान
13. श्री विमलनाथ महामण्डल विधान
14. श्री अनन्तनाथ महामण्डल विधान
15. श्री धर्मनाथ जी महामण्डल विधान
16. श्री शांतिनाथ महामण्डल विधान
17. श्री कुंथुनाथ महामण्डल विधान
18. श्री अरहनाथ महामण्डल विधान
19. श्री मल्लिनाथ महामण्डल विधान
20. श्री मुनिसुव्रतनाथ महामण्डल विधान
21. श्री नमिनाथ महामण्डल विधान
22. श्री नेमिनाथ महामण्डल विधान
23. श्री पार्श्वनाथ महामण्डल विधान
24. श्री महावीर महामण्डल विधान
25. श्री पंचपरमेष्ठी विधान
26. श्री णमोकार मंत्र महामण्डल विधान
27. श्री सर्वसिद्धीप्रदायक श्री भक्तामर महामण्डल विधान
28. श्री सम्मेद शिखर विधान
29. श्री श्रुत स्कंध विधान
30. श्री यागमण्डल विधान
31. श्री जिनबिम्ब पंचकल्याणक विधान
32. श्री त्रिकालवर्ती तीर्थंकर विधान
33. श्री कल्याणकारी कल्याण मंदिर विधान
34. लघु समवशरण विधान
35. सर्वदोष प्रायश्चित विधान
36. लघु पंचमेरू विधान
37. लघु नंदीश्वर महामण्डल विधान
38. श्री चंवलेश्वर पार्श्वनाथ विधान
39. श्री जिनगुण सम्पतिविधान
40. एकीभाव स्तोत्र विधान
41. श्री ऋषि मण्डल विधान
42. श्री विषापहार स्तोत्र महामण्डल विधान
43. श्री भक्तामर महामण्डल विधान
44. वास्तु महामण्डल विधान
45. लघु नवग्रह शांति महामण्डल विधान
46. सूर्य अरिष्टनिवारक श्री पद्मप्रभ विधान
47. श्री चौंसठ ऋद्धि महामण्डल विधान
48. श्री कर्मदहन महामण्डल विधान
49. श्री चौबीस तीर्थंकर महामण्डल विधान
50. श्री नवदेवता महामण्डल विधान
51. वृहद ऋषि महामण्डल विधान
52. श्री नवग्रह शांति महामण्डल विधान
53. कर्मजयी श्री पंच बालयति विधान
54. श्री तत्वार्थसूत्र महामण्डल विधान
55. श्री सहस्रनाम महामण्डल विधान
56. वृहद नंदीश्वर महामण्डल विधान
57. महामृत्युंजय महामण्डल विधान
59. श्री दशलक्षण धर्म विधान
60. श्री रत्नत्रय आराधना विधान
61. श्री सिद्धचक्र महामण्डल विधान
62. अभिनव वृहद कल्पतरू विधान
63. वृहद श्री समवशरण मण्डल विधान
64. श्री चारित्र लब्धि महामण्डल विधान
65. श्री अनन्तव्रत महामण्डल विधान
66. कालसर्पयोग निवारक मण्डल विधान
67. श्री आचार्य परमेष्ठी महामण्डल विधान
68. श्री सम्मेद शिखर कूटपूजन विधान
69. त्रिविधान संग्रह–1
70. त्रि विधान संग्रह
71. पंच विधान संग्रह
72. श्री इन्द्रध्वज महामण्डल विधान
73. लघु धर्म चक्र विधान
74. अर्हत महिमा विधान
75. सरस्वती विधान
76. विशद महाअर्चना विधान
77. विधान संग्रह (प्रथम)
78. विधान संग्रह (द्वितीय)
79. कल्याण मंदिर विधान (बड़ा गांव)
80. श्री अहिच्छत्र पार्श्वनाथ विधान
81. विदेह क्षेत्र महामण्डल विधान
82. अर्हत नाम विधान
83. सम्यक् अराधना विधान
84. श्री सिद्ध परमेष्ठी विधान
85. लघु नवदेवता विधान
86. लघु मृत्युँजय विधान
87. शान्ति प्रदायक शान्तिनाथ विधान
88. मृत्युञ्जय विधान
89. लघु जम्बू द्वीप विधान
90. चारित्र शुद्धिव्रत विधान
91. क्षायिक नवलब्धि विधान
92. लघु स्वयंभू स्तोत्र विधान
93. श्री गोम्मटेश बाहुबली विधान
94. वृहद निर्वाण क्षेत्र विधान
95. एक सौ सत्तर तीर्थंकर विधान
96. तीन लोक विधान
97. कल्पद्रुम विधान
98. श्री चौबीसी निर्वाण क्षेत्र विधान
99. श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर विधान
100. श्री सहस्त्रनाम विधान (लघु)
101. श्री त्रैलोक्य मण्डल विधान (लघु)
102. श्री तत्वार्थ सूत्र विधान (लघु)
103. पुण्यास्त्रव विधान
104. सप्तऋषि विधान
105. तेरहद्वीप विधान
106. श्री शान्ति,कुन्थु, अरहनाथ मण्डल विधान
107. श्रावकव्रत दोष प्रायश्चित विधान
108. तीर्थंकर पंचकल्याणक तीर्थ विधान
109. सम्यक् दर्शन विधान
110. श्रुतज्ञान व्रत विधान
111. ज्ञान पच्चीसी व्रत विधान
112. तीर्थंकर पंचकल्याणक तिथि विधान
113. विजय श्री विधान
114. चारित्र शुद्धि विधान
115. श्री आदिनाथ पंचकल्याणक विधान
116. श्री आदिनाथ विधान (रानीला)
117. श्री शांतिनाथ विधान (सामोद)
118. दिव्यध्वनि विधान
119. षट्खण्डागम विधान
120. श्री पार्श्वनाथ पंचकल्याणक विधान
121. विशद पञ्चागम संग्रह
122. जिन गुरु भक्ती संग्रह
123. धर्म की दस लहरें
124. स्तुति स्तोत्र संग्रह
125. विराग वंदन
126. बिन खिले मुरझा गए
127. जिंदगी क्या है
128. धर्म प्रवाह
129. भक्ती के फूल
130. विशद श्रमण चर्या
131. रत्नकरण्ड श्रावकाचार चौपाई
132. इष्टोपदेश चौपाई
133. द्रव्य संग्रह चौपाई
134. लघु द्रव्य संग्रह चौपाई
135. समाधितन्त्र चौपाई
136. शुभषितरत्नावली
137. संस्कार विज्ञान
138. बाल विज्ञान भाग-3
139. नैतिक शिक्षा भाग-1, 2, 3
140. विशद स्तोत्र संग्रह
141. भगवती आराधना
142. चिंतवन सरोवर भाग-1
143. चिंतवन सरोवर भाग-2
144. जीवन की मन:स्थितियाँ
145. आराध्य अर्चना
146. आराधना के सुमन
147. मूक उपदेश भाग-1
148. मूक उपदेश भाग-2
149. विशद प्रवचन पर्व
150. विशद ज्ञान ज्योति
151. जरा सोचो तो
152. विशद भक्ती पीयूष
153. विजोलिया तीर्थपूजन आरती चालीसा संग्रह
154. विराटनगर तीर्थपूजन आरती चालीसा संग्रह

नोट : उपरोक्त 120 विधानों में से अधिकाधिक विधान कर अथाह पुण्याभव करें। –मुनि विशालसागर